बी0ए0 अन्तिम वर्ष – 2018
हिन्दी साहित्य

द्वितीय प्रश्न–पत्र

काव्यांग विवेचन एवं हिन्दी गद्य विधाओं का स्वरूप

नोट : यह प्रश्न–पत्र तीन घण्टे की अवधि एवं 100 अंकों का होगा।

इकाई 1 काव्य–लक्षण, काव्य–हेतु, काव्य–प्रयोजन, काव्य–भेद।

इकाई 2 रस का स्वरूप, रस के अवयव–स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव, संचारी भाव। रस के भेदों का परिचय।

इकाई 3 **अलंकार** : सामान्य परिचय, निर्धारित अलंकार–अनुप्रास, यमक, श्लेष, वक्रोक्ति, उपमा, रूपक, भ्रान्तिमान, सन्देह, उत्प्रेक्षा, दृष्टान्त, विरोधाभास, असंगति (कुल 12)
छन्द : सामान्य परिचय, निर्धारित छन्द–दोहा, सोरठा, चौपाई, रोला, इन्द्रवज्रा, मन्दाक्रान्ता, उपेन्द्रवज्रा, मदिरा सवैया, मत्तगयन्द सवैया, दुर्मिल सवैया, मनहरण, देव घनाक्षरी (कुल 12)

इकाई 4 **काव्य–गुण**
काव्य–दोष : निर्धारित काव्य–दोष–श्रुतिकटुत्व, च्युतसंस्कृति, ग्राम्यत्व, अश्लीलत्व, अप्रतीतत्व, क्लिष्टत्व, न्यूनपदत्व, अधिकपदत्व, पुनरुक्तत्व, अक्रमत्व, दुष्क्रमत्व (कुल 11)
शब्द शक्तियाँ

इकाई 5 **गद्य विधाओं** – नाटक, एकांकी, उपन्यास, कहानी, निबन्ध, आलोचना, संस्मरण, रेखाचित्र, आत्मकथा, जीवनी का स्वरूप एवं तात्विक विवेचन।

इकाई एवं अंक–विभाजन :

खण्ड (क) प्रत्येक इकाई से दो–दो (कुल दस) लघूत्तरी प्रश्न (शब्द सीमा 30 शब्द) 10x2= 20 अंक

खण्ड (ख) प्रत्येक इकाई से विकल्प सहित एक–एक (कुल पाँच) टिप्पणी परक प्रश्न (शब्द सीमा 250 शब्द) 5x7= 35 अंक

खण्ड (ग) प्रत्येक इकाई से एक–एक आलोचनात्मक प्रश्न पूछा जायेगा, जिनमें से किन्हीं तीन के उत्तर देने होंगे (शब्द सीमा 500 शब्द) 3x15= 45 अंक

सहायक पुस्तकें :

सिद्धान्त और अध्ययन : गुलाब राय
काव्य प्रदीप : रामबहोरी शुक्ल
साहित्य रूप : शिवकरण सिंह
काव्य के रूप : गुलाब राय
हिन्दी आलोचना : विश्वनाथ त्रिपाठी
काव्यशास्त्र : भगीरथ मिश्र

काव्य-लक्षण

भारतीय काव्य-चिन्तन में कवि तथा काव्य का अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है | अनेक भारतीय काव्यशास्त्रियों का मानना है कि कवि-कर्म ही काव्य है | आदिकाल से ही काव्य के लक्षण को परिभाषित किए जाने का प्रयास होता रहा है | 'काव्य लक्षण' में प्रयुक्त लक्षण शब्द का अर्थ है लक्ष्यभूत पदार्थ की कोई ऐसी विशेषता जिसमें अव्याप्ति या अतिव्याप्ति दोष न हो | भारतीय काव्यशास्त्र में 'काव्य' शब्द का प्रयोग अत्यंत व्यापक अर्थ में किया गया है | संस्कृत वाङ्मय में काव्य तथा साहित्य एक दूसरे के पर्यायवाची माने जाते हैं | इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए ही संस्कृत आचार्यों के साथ ही पाश्चात्य एवं हिन्दी के आधुनिक चिन्तकों ने काव्य-लक्षण पर विचार किया है |

संस्कृत आचार्यों के विचार :

भारतीय आचार्यों ने काव्य के स्वरूप पर विस्तार से चिन्तन किया है तथा उसे अपने-अपने ढंग से परिभाषित करने का प्रयास किया है | आचार्य भरत संस्कृत काव्यशास्त्र के आदि आचार्य माने जाते हैं | इनका ग्रंथ **'नाट्यशास्त्र'** संस्कृत काव्यशास्त्र का आदि ग्रंथ है जिसमें वे काव्यकला के संबंध में लिखते हुए कहते हैं ---

" नाटक को देखने वालों के लिए शुभकाव्य वह होता है जिसकी रचना कोमल और ललित पदों से की गयी हो, जिसमें शब्द और अर्थ गूढ़ न हों, जिसको जनसाधारण सरलता से समझ सके, जो तर्कसंगत हो, जिससे नृत्य की योजना की जा सके, जिसमें भिन्न-भिन्न प्रकार के रस स्वीकार किए गए हों और जिसमें कथानक-संधियों का पूरा निर्वाह किया गया हो |" इसे शुद्ध रूप में काव्य-लक्षण नहीं माना जा सकता है लेकिन तात्विक विवेचन की दृष्टि से इसका अपना महत्त्व है |

आचार्य भरत के पश्चात आचार्य भामह आते हैं | **भामह** का मानना है कि --- **'शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्'** | इसका अर्थ यह हुआ कि शब्द और अर्थ से युक्त रचना को काव्य कहते हैं |

आचार्य **मम्मट** की दृष्टि में --- '**तद्दोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृती पुनः क्वापि'** | तात्पर्य यह कि दोष-रहित, गुण-सहित तथा कभी-कभी अलंकाररहित शब्दार्थ काव्य है |

आचार्य **दण्डी** ने काव्य को **'इष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली'** माना है | आपका मानना है कि अभिलषित अर्थ को व्यक्त करने वाली पदावली काव्य है |

भामह के अनुकरण पर शब्दार्थ को काव्य मनाने वालों की संस्कृत काव्यशास्त्र में विशाल परंपरा देखने को मिलती है | आचार्य **रुद्रट** ने **'ननु शब्दार्थौ काव्यम्'** कह कर शब्द और अर्थ के संयोग को काव्य माना तथा चारुतापूर्ण शब्द और अर्थ के उपादान पर ही बल दिया है |

रसवादी आचार्य **विश्वनाथ** ने आचार्य मम्मट द्वारा प्रस्तुत काव्य-लक्षण की सर्वांगीण आलोचना करते हुए **-'वाक्यम् रसात्मकम काव्यम्'** कहते हुए रसात्मक वाक्य को काव्य माना | इस काव्य-लक्षण में रस शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थ में किया गया है |

संस्कृत काव्यशास्त्र की परम्परा में **पंडितराज जगन्नाथ** का अपना विशिष्ट महत्त्व है | वे मानते हैं कि -**'रमणीयार्थः प्रतिपादकः शब्दः काव्यम्'** | तात्पर्य यह कि रमणीय अर्थ का प्रतिपादन करने वाला शब्द काव्य है |

ध्वन्याचार्य **आनंदवर्धन** ने **'काव्यस्यात्मा ध्वनिः'** कहते हुए ध्वनि को काव्य की आत्मा माना | तात्पर्य यह कि आनंदवर्धन की दृष्टि में ध्वनि-विहीन रचना को काव्य नहीं कहा जा सकता है |

आचार्य **कुंतक** की दृष्टि में 'वक्र कवि व्यापार युक्त शब्दार्थ काव्य है तथा उसे बंधनयुक्त भी होना चाहिए' | इस प्रकार प्रायः भारतीय आचार्यों ने काव्य की पहचान के रूप में शब्द और अर्थ की महत्ता को ही सर्वोपरि माना है |

पाश्चात्य चिन्तकों के विचार :

संस्कृत आचार्यों की तरह पाश्चात्य विचारकों ने भी काव्य को परिभाषित करते हुए भाव, कल्पना,शिक्षा और आनन्द की उपस्थिति को काव्य में आवश्यक माना है | यूनानी आचार्य **अरस्तू** ने काव्य के लिए अनुकरण को महत्त्वपूर्ण माना है | इनके अनुसार काव्य एक कला है और अनुकरण इसका मौलिक तत्त्व है तथा यह अनुकरण भाषा के माध्यम से ही हुआ करता है | इस प्रकार अरस्तू की दृष्टि में 'भाषा के माध्यम से होने वाली अनुकृति काव्य है' |

फिलिप सिडनी ने भी काव्य को अनुकरण माना है | इनका मानना है कि यदि रूपक के रूप में काव्य के स्वरूप को अभिव्यक्त किया जाये तो कविता को एक बोलता हुआ चित्र कहा जाएगा | सिडनी के अनुसार 'काव्य वह अनुकरणात्मक कला है जिसका लक्ष्य शिक्षा और आनन्द प्रदान करना है' |

कालरिज ने सर्वोत्तम शब्दों के सर्वोत्तम विधान को काव्य कहा है और बताया है कि काव्य का ध्येय सत्य का नहीं वरन आनन्द का प्रदर्शन है |

मैथ्यू ऑर्नाल्ड कवि भी थे और आलोचक भी | उनका मानना है कि 'काव्य सर्वाधिक आनन्द का साधन तथा अभिव्यक्ति का पूर्ण रूप है' |

विचारक **विलियम हैजलिट** ने काव्य को 'भावना और कल्पना की सर्वोत्तम भाषा' माना है | इसी प्रकार अभिव्यंजनावादी आचार्य **क्रोचे** कला (काव्य) को एक प्रकार का अन्तर्ज्ञान स्वीकार करते हैं |

महाकवि **वर्ड्सवर्थ** का मानना है कि 'शांति के क्षणों में स्मृत-भाव तथा प्रबल मनोवेगों के सहज ऊच्छ्लन ही काव्य है' |

महाकवि **शैली** के अनुसार 'काव्य सर्वाधिक सुखी एवं श्रेष्ठतम हृदयों के श्रेष्ठतम क्षणों का लेखाजोखा है' | वे यह भी मानते हैं कि 'काव्य कल्पना और भावावेशों की अभिव्यक्ति है' |

इस प्रकार स्पष्ट है कि अधिकांश पाश्चात्य चिन्तकों ने काव्य में भावना एवं कल्पना को ही सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण माना है तथा आनन्द की उपस्थिति को उसका अनिवार्य तत्त्व स्वीकारा है |

हिन्दी आचार्यों के विचार :

काव्य-लक्षण पर हिन्दी के आचार्यों ने भी विस्तार से विचार किया है | इस दृष्टि से रीतिकालीन आचार्यों का अपना विशिष्ट महत्त्व है | यद्यपि रीतिकालीन आचार्यों ने काव्य-विवेचन पर्याप्त विस्तार से किया है लेकिन इनके विवेचन में प्रायः मौलिकता का अभाव मिलता है क्योंकि अधिकांश काव्य-चिंतकों ने संस्कृत आचार्यों का ही अनुकरण किया है | रीतिकालीन परम्परा में आचार्य चिंतामणि का अपना विशिष्ट महत्त्व है | आचार्य **चिंतामणि** ने काव्य-लक्षण पर विचार करते हुए लिखा है कि --

सगुनालंकारन सहित, दोषरहित जो होइ |
शब्द-अर्थ ताको कवित, क़हत बिबुध सब कोइ ||

हिन्दी में आचार्य **भिखारीदास** अकेले ऐसे आचार्य हैं जिन्होंने अपने काव्य-लक्षण में अलंकार,रस,ध्वनि,और गुणों का समावेश किया | भिखारीदास की दृष्टि में -'काव्य वह शब्दार्थ है जो रस, अलंकार, ध्वनि और गुणों से युक्त हो' | **'काव्य-निर्णय'** में वे लिखते हैं --

रस कविता को अंग, भूषन हैं भूषन सकल |
गुन सरूप औ रंग, दूषन करै कुरूपता ||

आचार्य **कुलपति** ने लोकोत्तर आनंद प्रदान करने वाले शब्द और अर्थ के सहभाव

को काव्य माना है ---

जग तें अद्भुत सुख-सदन शब्द अर्थ कवित्त |

यह लच्छन मैंने कियो समझु ग्रंथ बहुचित्त ||

संस्कृत आचार्यों की परंपरा का पोषण करते हुए **देव** ने काव्य-लक्षण को इस प्रकार प्रस्तुत किया है --

शब्द सुमति मुख ते कढ़ै, लै पद बचननि अर्थ |

छन्द, भाव, भूषण, सरस, सो कहि काव्य समर्थ ||

इसी प्रकार श्रीपति ने 'काव्य-सरोज' के अन्तर्गत जो लक्षण प्रस्तुत किया है उस पर मम्मट का प्रभाव देखने को मिलता है | श्रीपति के अनुसार ---

शब्द अर्थ बिन दोष गुन अलंकार रसवान |

ताको काव्य बखानिए श्रीपति परम सुजान ||

आचार्य **महावीरप्रसाद द्विवेदी** ने सीधे-सीधे काव्य-लक्षण नहीं प्रस्तुत किया है | वे मानते हैं कि शिक्षित कवि की उक्तियों में चमत्कार का होना परम आवश्यक है | यदि कविता में चमत्कार नहीं, कोई विलक्षणता नहीं तो उससे आनन्द की प्राप्ति नहीं हो सकती | उन्होंने 'रसज्ञ रंजन' के अन्तर्गत कविता के लिए शास्त्रोक्त गुणों से हट कर पाँच बातों की आवश्यकता पर बल दिया है -----1. साधारण लोगों की अवस्था, विचार और मनोविकारों का वर्णन 2. धीरज, साहस, प्रेम, दया आदि गुणों का समावेश 3. सूक्ष्म कल्पना और गूढ़ अलंकार-योजना का निषेध 4. भाषा की सहजता, स्वाभाविकता और मनोहरता पर बल 5. सीधे, परिचित और सुहावने छंदों का प्रयोग |

आचार्य **रामचन्द्र शुक्ल** के अनुसार - 'हृदय की मुक्तावस्था तथा रस-दशा के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द-विधान करती है, उसे काव्य कहते हैं | जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञान-दशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की मुक्तावस्था रस-दशा कहलाती है | हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द-विधान करती आयी है उसे कविता कहते हैं' |

महाकवि **जयशंकर प्रसाद** के अनुसार - 'काव्य आत्मा की संकल्पात्मक अनुभूति है' |

उपर्युक्त सभी काव्य-लक्षणों पर विचार करने के बाद कहा जा सकता है कि संस्कृत आचार्यों के लक्षणों को आधार मानने के बावजूद आगे के सभी चिन्तकों- विचारकों ने अपनी दृष्टि से कुछ-न-कुछ नया जोड़ने का प्रयास किया है | अतः उन सभी का अपना अलग एवं विशिष्ट महत्त्व है |

+++++

काव्य-प्रयोजन

जब काव्य के संबंध में चर्चा की जाती है तो एक महत्त्वपूर्ण सवाल सामने आता है कि साहित्य क्यों रचा जाय | कहने का तात्पर्य यह कि काव्य के रचे जाने का प्रयोजन क्या होता है | वस्तुतः इस संसार में मनुष्य जो भी कार्य करता है, उसमें उसका कोई-न-कोई प्रयोजन अवश्य होता है | अर्थ यह कि कोई रचना निष्प्रयोजन नहीं होती है | संस्कृत साहित्य की यह विशेषता रही है कि हर ग्रंथकार अपने ग्रंथ को रचने का प्रयोजन अवश्य बताता है | साथ ही वह यह भी बताता है कि उसके ग्रंथ का प्रतिपाद्य क्या है |

संस्कृत काव्यशास्त्र में काव्य-प्रयोजन :

संस्कृत आचार्यों में भरत, भामह, कुंतक, रुद्रट, मम्मट आदि सभी ने इस संबंध में विचार किया है | संस्कृत काव्यशास्त्र के आदि आचार्य **भरत मुनि** ने अपने 'नाट्यशास्त्र' में नाट्य-प्रयोजनों का उल्लेख करते हुए उसी के माध्यम से काव्य-प्रयोजन की ओर संकेत किया है | वे लिखते हैं कि --- "दुःख, श्रम, शोक से आर्त तपस्वियों के विश्राम के लिए तथा धर्म, यश, आयु-वृद्धि, हित-साधन, बुद्धि-वर्धन और लोकोपदेश के निमित्त नाट्य की रचना होगी |" स्पष्ट है कि भरत मुनि जनहित को नाट्य (काव्य) का प्रयोजन मानते हैं |

निस्संदेह परवर्ती सभी आचार्यों के सामने ये प्रयोजन रहे हैं | उन्होंने अपने विवेक से इनमें से कुछ को ग्रहण किया तथा कुछ को छोड़ने के साथ ही कुछ अपनी ओर से जोड़ दिया है | आचार्य **भामह** के अनुसार --

धर्मार्थकाममोक्षेषु वैचक्षण्यं कलासु च |
करोति कीर्तिं प्रीतिं च साधु काव्य निबन्धनम् ||

कहने का तात्पर्य यह कि काव्य की रचना धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति तथा कलाओं में निपुणता की उपलब्धि के निमित्त की जाती है | साथ ही वह कीर्ति एवं प्रीति (आनंद) प्रदान करने वाली भी होती है |

आचार्य **वामन** ने मात्र 'कीर्ति' और 'प्रीति' को ही काव्य का प्रयोजन स्वीकार किया है | वे कहते हैं ----"काव्यम सद् दृष्टादृष्टार्थ प्रीतिकीर्ति हेतुत्वात" | तात्पर्य यह कि सुंदर काव्य 'कीर्ति' और 'प्रीति' का हेतु होने से दृष्ट (ऐहिक,लौकिक) और अदृष्ट फल वाला होता है | इस प्रकार आचार्य वामन के अनुसार काव्य के दो प्रयोजन हैं - एक है प्रीति या आनंद साधना जो दृष्ट-प्रयोजन है और दूसरा है कीर्ति जो अदृष्ट-प्रयोजन है |

आचार्य **दण्डी** ने लिखा है कि शब्द तीनों लोकों को ज्ञान का प्रकाश देने वाला तथा कवि और वर्ण्य - राजा आदि - के यश को स्थिरता प्रदान करने वाला है |

रुद्रट की दृष्टि प्रधान रूप से कवि पर है | उनका मानना है कि कवि सरस काव्य करके महापुरुषों के यश को कल्पकल्पांत तक स्थायी बना देता है | जो एक बहुत बड़ा उपकार है और जिसका पुण्य फल निस्संदेह कवि को प्राप्त होता है | इतना ही नहीं, स्वयं उसका भी यश कल्पांत तक स्थायी हो जाता है |

आचार्य **अभिनवगुप्त** ने कवि और सहृदय दोनों की दृष्टि से प्रीति को ही प्रधान काव्य-प्रयोजन माना है |

आचार्य **मम्मट** ने काफी सोच-विचार के बाद काव्य के छह प्रयोजन निर्दिष्ट किए हैं --

काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये |
सद्यः परनिर्वृत्तये कांतासम्मिततयोपदेश युजे ||

कहने का अर्थ यह कि काव्य यश का जनक, अर्थ का उत्पादक, लोक-व्यवहार का बोधक, अनिष्ट का नाशक, सद्यः परम आनंद देने वाला तथा कांता के समान उपदेश देने वाला होता है |

हिन्दी काव्यशास्त्र में काव्य-प्रयोजन :

संस्कृत आचार्यों के ही समान हिन्दी के विचारकों एवं चिंतकों ने भी काव्य-प्रयोजन पर विस्तारपूर्वक विचार किया है | उन सब पर विचार करने से पहले संत कवि **तुलसीदास** के उस कथन को देख लेना चाहिए जिसमें वे अपनी रचना के प्रयोजन की ओर संकेत करते हुए कहते हैं --

कीरति भनीति भूति भलि सोई | सुरसरि सम सब कहँ हित होई ||

महाकवि तुलसीदास के कहने का तात्पर्य यह कि कीर्ति, कविता और संपत्ति वही उत्तम है जिससे सब का कल्याण हो |

रीतिकालीन आचार्यों में कुलपति, देव, सोमनाथ, भिखारीदास आदि ने काव्य-प्रयोजनों पर विचार किया है लेकिन इन प्रयोजनों पर संस्कृत आचार्यों के विचारों का ही प्रभाव दिखाई देता है | **कुलपति** ने कहा है -

जस संपति आनंद अति दुरितन डारै खोई |
होत कवित तें चतुरई जगत राग बस होई ||

अर्थात् काव्य से यश, संपत्ति और आनंद की प्राप्ति होती है ; संकट या पाप दूर हो जाता है और चतुरता (लोक-व्यवहार-ज्ञान) आती है तथा संसार के लोग कविता में निहित राग-तत्त्व

के वशीभूत हो जाते हैं |

कवि **देव** यश को काव्य का सर्वोत्तम प्रयोजन मानते हैं | उनके अनुसार घर, धाम,धन, वृक्ष, सरोवर, कूप सब नष्ट हो जाते हैं किन्तु रस-रूप भव्य काव्य के कर्ता का यश रूपी शरीर संसार में अमर हो जाता है | वे लिखते हैं --

रहत न घर वर धाम धन, तरुवर सरवर कूप |
जस शरीर जग में अमर, भव्य काव्य रस रूप ||

परम्परागत प्रयोजनों की आवृत्ति करते हुए **सोमनाथ** ने कहा है कि --

कीरति वित्त विनोद अरु अति मंगल को देति |
करै भलो उपदेश नित वह कवित्त चित चेति ||

आचार्य **भिखारीदास** ने इस पर विस्तार के साथ विचार किया है और उसे प्रामाणिक एवं विश्वसनीय रूप में प्रस्तुत किया है --

एक लहैं तप-पुंजन्ह के फल ज्यों तुलसी अरु सूर गोसाईं |
एक लहैं बहु संपति केशव, भूषन ज्यों बरवीर बड़ाई ||
एकन्ह को जसही सों प्रयोजन है रसखानि रहीम की नाईं |
दास कवित्तन्ह की चरचा बुधिवन्तन को सुखदै सब ठाईं ||

अर्थात् सूर और तुलसी जैसे कवि काव्य-रचना करके तपस्या का फल प्राप्त करते हैं | केशव, भूषण और बीरबल जैसे कवि प्रचुर संपत्ति लाभ करते हैं | रसखान और रहीम जैसे कवि केवल यश की आकांक्षा करते हैं | काव्य-चर्चा बुद्धिमानों के लिए सर्वत्र सुख देने वाली होती है |

हिन्दी के आधुनिक काल के आचार्यों, चिंतकों एवं कवियों ने न तो संस्कृत-काव्यशास्त्र के आचार्यों का ही अंधानुकरण किया और न ही रीतिकाल के आचार्यों का | युग की बदलती हुई काव्य-विषयक मान्यताओं के प्रकाश में ही इन्होंने अपने काव्य-प्रयोजनों का निरूपण किया है | **आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी** ने 'कवि-कर्तव्य' का निरूपण करते हुए कहा है - "पहुँचे हुए पंडितों का कथन है कि कवि भी 'धर्म संस्थापनार्थाय' उत्पन्न होते हैं |.... वे स्वभाव से ही ऐसा करते हैं कि संसार का कल्याण हो और इस प्रकार उनका नाम आप ही अमर हो जाय |... सारांश यह कि कविता लिखते समय कवि के सामने एक ऊँचा उद्देश्य अवश्य रहना चाहिए |"

श्रीधर पाठक ने साहित्यकार (कवि) में उस क्षमता का होना आवश्यक माना है जो "लोकवृत्ति को किसी उद्दिष्ट पथ पर ले जाकर उन्नति की लीक पर अग्रसर कर सके |" इस प्रकार श्रीधर पाठक ने लोकमंगल को ही काव्य-प्रयोजन माना है |

श्रीधर पाठक की ही तरह के विचार राष्ट्रकवि **मैथिलीशरण गुप्त** के भी हैं | वे लिखते हैं --

केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिए |
उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए ||

छायावादी कवि **सुमित्रानन्दन पंत** ने 'स्वांतःसुखाय' और 'लोकहित' को प्रयोजन किया है | इसी प्रकार कविवर जयशंकर प्रसाद की मान्यता है कि -'संसार को काव्य से दो तरह के लाभ पहुँचते हैं - मनोरंजन और शिक्षा |

आचार्य **रामचन्द्र शुक्ल** ने कवि के लिए 'लोकमंगल'की साधना' को आवश्यक माना है | कविता का अंतिम लक्ष्य निर्दिष्ट करते हुए वे कहते हैं कि -**"कविता का अंतिम लक्ष्य जगत के मार्मिक पक्षों का प्रत्यक्षीकरण करके उनके साथ मनुष्य-हृदय का सामंजस्य-स्थापन है |"** 'रस-मीमांसा' के अंतर्गत वे तीन बातों पर ज़ोर देते हैं ---1. शब्द-विन्यास द्वारा श्रोता का ध्यान आकर्षित करना 2. भावों का स्वरूप प्रत्यक्ष करना 3. नाना पदार्थों के साथ उनका प्रकृत संबंध स्थापित करना | इस प्रकार शुक्ल जी रस (आनंद) की प्राप्ति तथा लोकमंगल कि भावना को ही मुख्य प्रयोजन मानते हैं |

डॉ. नगेन्द्र का मानना है कि साहित्य का प्रयोजन आत्माभिव्यक्ति है | कवि या लेखक के हृदय में जो भाव या विचार उठते हैं, उन्हें वह प्रकाशित करना चाहता है | अतः आत्मप्रकाशन की क्षमता को अवसर देना ही प्रयोजन है |

पाश्चात्य काव्यशास्त्र में काव्य-प्रयोजन :

पाश्चात्य चिन्तकों का दृष्टिकोण प्रायः वस्तुपरक रहा है, इसलिए यहाँ के अधिकांश विचारकों के काव्य-प्रयोजन में वस्तुपरक-प्रधान ही रहे हैं | यही कारण है कि यहाँ के अधिकांश विद्वानों ने समाज और जीवन के परिवेश में ही काव्य-प्रयोजनों का विवेचन किया है | स्थूलतः इन आचार्यों एवं चिन्तकों को वर्गों में विभक्त करें तो पहला वर्ग उन आचार्यों का है जो लोकमंगल को ही काव्य का प्रयोजन मानते हैं | प्लेटो, रस्किन, टालस्टाय इस वर्ग के प्रमुख प्रतिनिधि आचार्य हैं |

टालस्टाय कला को मानव-एकता का महत्त्वपूर्ण साधन मानते हैं | उनके अनुसार–"कला आनंद नहीं, वरन मानव-एकता का साधन हैं, जो मानव को सहानुभूति द्वारा परस्पर मिलता है|"

एक वर्ग उन आचार्यों का है जो केवल आनंद को ही काव्य का प्रयोजन मानते

हैं | अरस्तू एवं मैथ्यू आर्नाल्ड इस वर्ग में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं | यूनानी आचार्य **अरस्तू** की परिभाषा को इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है - "काव्य भाषा के माध्यम से कल्पना द्वारा मानव-जीवन का पुनःसृजन है |" इस प्रकार अरस्तू की दृष्टि में काव्य से ज्ञान-जनित शिक्षा तो मिलती ही है, काल्पनिक आनंद भी मिलता है | अपने गुरु प्लेटो द्वारा काव्य पर किए गए आक्षेपों का निराकरण करते हुए इन्होंने लिखा है कि - "कला का विशिष्ट उद्देश्य आनंद है, पर यह आनंद नीति-सापेक्ष है |"

मैथ्यू आर्नाल्ड के अनुसार काव्य का ध्येय जगत के यथार्थ का चित्रण करके उसे आदर्शोन्मुख बनाना है | इसलिए मैथ्यू आर्नाल्ड काव्य को जीवन की आलोचना मानते हैं |

एक वर्ग वह भी ही जो काव्य और जीवन का किसी भी प्रकार का संबंध स्वीकार नहीं करते | इनकी दृष्टि में 'काव्य' काव्य के लिए अथवा 'कला कला के लिए' है | इस वर्ग में आस्कर वाइल्ड, ब्रैडले प्रमुख हैं |

यदि हम उपर्युक्त सभी प्रयोजनों पर दृष्टि रखकर विभाजन करें तो इन्हें दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है -- आंतरिक प्रयोजन एवं बाह्य प्रयोजन | आनंद प्रदान करना काव्य का आंतरिक प्रयोजन और शेष सब बाह्य प्रयोजन हैं | निस्संदेह यह कहा जा सकता है कि आनंद ही काव्य का मूल प्रयोजन है लेकिन वस्तुपरक प्रयोजन की किसी भी रूप में उपेक्षा नहीं की जा सकती है |

=======

काव्य-हेतु

कवि-कर्म को काव्य कहते हैं | हेतु का अर्थ है कारण | काव्य-हेतु का सामान्य अर्थ है - काव्य का कारण | वस्तुतः काव्य एक ऐसी कृति है जिसके लिए कोई-न-कोई कारण या हेतु अनिवार्य होता है | काव्य हेतुओं से तात्पर्य है -काव्य-रचना के कारण, जैसे - प्रतिभा, व्युत्पत्ति, अभ्यास आदि | दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि काव्य-हेतु वह शक्ति है जिससे कवि काव्य की रचना कर पाता है | यों भी संसार के प्रत्येक कार्य के पीछे कोई-न-कोई हेतु या कारण होता है | साहित्य भी इस नियम का अपवाद नहीं है | साहित्य जिसका जीवन से घनिष्ठ संबंध है, वह बिना हेतु के अपनी सार्थकता सिद्ध नहीं कर सकता | काव्य-रचना की सामर्थ्य प्रतिभाजन्य होती है या अभ्यास-साध्य, इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर भारतीय एवं पाश्चात्य विचारकों ने अपने-अपने ढंग से खोजने का प्रयास किया है |

काव्य-हेतु संबंधी भारतीय दृष्टिकोण :

संस्कृत काव्यशास्त्र में **भामह** पहले आचार्य मिलते हैं जिन्होंने काव्य-हेतुओं का स्पष्ट विवेचन किया है | उनके अनुसार -

गुरुपदेशादध्येतुं शास्त्रं जडधियोप्यलम् |
काव्यं तु जायते जातु कस्यचित् प्रतिभावतः ||

अर्थात् आचार्य **भामह** ने काव्य-रचना में प्रतिभा की प्रधानता स्वीकार की है | उनका कहना है कि गुरु के उपदेश से शास्त्रों का अध्ययन तो कोई मूर्ख व्यक्ति भी कर सकता है | अध्ययन द्वारा एक मूर्ख पंडित तो बन सकता है किन्तु कवि नहीं | काव्य-रचना तो प्रतिभा द्वारा ही संभव है | इस प्रकार भामह ने काव्य -हेतु का मूल कारण प्रतिभा को माना है |

आचार्य **दण्डी** ने 'काव्यादर्श' में काव्य के तीन हेतुओं की ओर संकेत किया है | ये तीन काव्य के हेतु हैं -1. नैसर्गिक प्रतिभा 2. शास्त्रों का ज्ञान 3. सतत अभ्यास | अर्थात् इन तीनों हेतुओं के सामंजस्य से ही उत्तम काव्य-रचना सुनिश्चित होती है | इस विषय में दण्डी का कथन इस प्रकार है --

नैसर्गिकी च प्रतिभा श्रुतं च बहुनिर्मलम् |
अमंदश्चाभियोगोऽस्याः कारणं काव्य सम्पदाः ||

अर्थात् नैसर्गिक प्रतिभा, शास्त्र-ज्ञान तथा उत्साहयुक्त दृढ़ अभ्यास काव्य-सम्पदा के प्रमुख कारण हैं | आगे चलकर आचार्य **दण्डी** अध्ययन तथा अभ्यास की प्रमुखता पर बल देते हैं और मानते हैं कि पूर्वसंस्कारजन्य प्रतिभा के अभाव में भी निरंतर अध्ययन एवं अभ्यासपूर्वक प्रयत्न करने पर वाग्देवी की कृपा प्राप्त हो सकती है, किन्तु व्युत्पत्ति और अभ्यास प्रतिभाविहीन व्यक्ति को कवि नहीं बना सकते |

आचार्य **वामन** के अनुसार शक्ति के बिना काव्य-सृजन संभव नहीं है | अर्थात् प्रतिभा ही कवित्व का कारण है - **'शक्तिः कवित्वबीजरूपः संस्कारविशेषः'** | इसी क्रम में आचार्य वामन लोक, विद्या और प्रकीर्ण को काव्य के हेतु मानते हैं | उनके अनुसार– **'लोकविद्याप्रकीर्ण च काव्यांगानि'** | लोक का अर्थ लोकवृत्त अथवा लोकव्यवहार का ज्ञान है, विद्या का अर्थ शास्त्रज्ञान है | प्रकीर्ण के अंतर्गत वामन ने लक्ष्यज्ञान, अभियोग, वृद्धसेवा, अवेक्षण, प्रतिभा एवं अवधान को आवश्यक माना है |

आचार्य **मम्मट** ने इन सभी हेतुओं को एक व्यवस्थित रूप प्रदान करते हुए क्रमशः शक्ति, निपुणता और अभ्यास को ही काव्य के हेतु के रूप में माना | आचार्य **मम्मट** अनुसार ---

शक्तिर्निपुणता लोकशास्त्र काव्याद्यवेक्षणात् |
काव्यज्ञ शिक्षयाभ्यासः इति हेतुस्तदुद्भवे ||

इन हेतुओं में मम्मट के अनुसार काव्य के प्रमुख हेतु तीन हैं --

1. शक्ति - अर्थात् प्रतिभा जो जन्मजात होती है |
2. निपुणता - अर्थात् काव्य-कौशल जो लोक और शास्त्र तथा काव्य के अनुशीलन से प्राप्त होता है |
3. अभ्यास - अर्थात् गुरु की शिक्षा के अनुसार काव्य-रचना का सतत अभ्यास |

'काव्यमीमांसा' के रचयिता **राजशेखर** ने केवल दो शीर्षकों में सभी काव्य-हेतुओं का समावेश करते हुए "शक्ति' एवं 'प्रतिभा' को काव्य-हेतु के रूप माना है | इन दोनों में भी वे शक्ति को महत्त्वपूर्ण मानते हुए अन्य सभी हेतुओं को प्रतिभा के भीतर समेट लिया है और उसे भी **'भावयित्री प्रतिभा'** तथा **'कारयित्री प्रतिभा'** के रूप में वर्गीकृत किया है |

पंडितराज जगन्नाथ ने लिखा है कि --**'तस्य च कारणं कविगता केवला प्रतिभा'** | अर्थात् काव्य का कारण कवि में विद्यमान केवल प्रतिभा है |

इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रतिभा, निपुणता एवं अभ्यास को ही प्रायः संस्कृत-आचार्यों ने काव्य के हेतु के रूप में स्वीकार किया है | यहाँ भी वे यह मानते हैं कि प्रतिभा काव्य का मूल हेतु है और शास्त्र-ज्ञान और अभ्यास से परिष्कृत-सुसंस्कृत सहजा और

उत्पाद्या प्रतिभा ही प्रधान हेतु होती है | फिर भी निपुणता अर्थात् व्युत्पत्ति और अभ्यास का भी अपना महत्त्व होता है | इन आचार्यों का मानना है कि रचयिता के पास व्यावहारिक जानकारी का भंडार होना आवश्यक होता है जिसकी प्राप्ति शास्त्रों के ज्ञान और लोक-निरीक्षण द्वारा हो सकती है | वस्तुतः काव्य-निर्माण के लिए निपुणता-प्राप्ति के इच्छुक कवि को लोकज्ञान से सम्पन्न होना आवश्यक ही नहीं अपितु अनिवार्य है | कुछ विद्वानों ने निपुणता को व्युत्पत्ति नाम दिया है | **राजशेखर** ने लिखा है - **'बहुज्ञता व्युत्पत्तिः'** अर्थात् व्युत्पत्ति का अर्थ बहुज्ञता है | माना जाता है कि बहुज्ञता होने पर ही बहुविषय-वर्णन का सामर्थ्य प्राप्त होता है क्योंकि काव्य में विविध विषयों का वर्णन करना पड़ता है जो बहुज्ञता के बिना संभव नहीं है | इसी तरह अभ्यास का भी अपना महत्त्व है | क्योंकि इसके द्वारा कवि अपनी रचना को उत्कृष्टता एवं प्रभावोत्पादकता प्रदान करता है |

हिन्दी के रीतिकालीन आचार्यों ने संस्कृत-परंपरा का ही अनुकरण किया है | आचार्य **श्रीपति** ने 'काव्य-सरोज' के अंतर्गत शक्ति, निपुणता, लोकमत, व्युत्पत्ति, अभ्यास और प्रतिभा को काव्य-हेतु बताया है | उनके अनुसार ---

शक्ति निपुणता लोकमत वितपति अरु अभ्यास |
अरु प्रतिभा ते होत है ताको ललित प्रकास ||

रीतिकालीन आचार्य **भिखारीदास** के अनुसार - ' जिस प्रकार अश्व, सारथी और चक्र तीनों के एकत्र होने पर रथ गतिमान होता है, उसी प्रकार शक्ति, सुकवियों से सीखी हुई काव्य-रीति एवं लोकज्ञान इन तीनों हेतुओं के सम्मिलित संयोजन द्वारा हृदयाकर्षक काव्य का निर्माण होता है |' वे लिखते हैं ---

सक्ति कवित्त बनाइवे की, जिहिं जन्म नक्षत्र मैं दीन्ह विधातैं |
काव्य की रीति सिखी सुकवीन सों, देखी-सुनी बहुलोक की बातैं ||
'दास जू' जामें एकत्र ये तीनि, बनै कविता मन रोचक तातैं |
एक बिना न चलै रथ जैसे धुरंधर सूत की चक्र निपातैं ||

आधुनिक हिन्दी विद्वानों में **डॉ. नगेन्द्र** आत्माभिव्यक्ति को ही साहित्य का मूल तत्त्व मानते हैं | उनके अनुसार - 'आत्माभिव्यक्ति ही वह मूल तत्त्व है जिसके कारण कोई व्यक्ति साहित्यकार और उसकी कृति साहित्य बन पाती है |' लेकिन यहाँ भी प्रतिभा की आवश्यकता पड़ती है, उसे किसी भी रूप में नजरन्दाज नहीं किया जा सकता |

काव्य-हेतु संबंधी पाश्चात्य दृष्टिकोण :

भारतीय काव्यशास्त्र की भाँति पाश्चात्य काव्यशास्त्र में भी प्लेटो के पहले तक

माना जाता रहा है कि काव्य-प्रतिभा शक्ति से ही प्राप्त होती है और कोई कवि तभी किसी काव्य की रचना कर सकता है, जब उसे ईश्वर की प्रेरणा मिलती है | दार्शनिक आचार्य **सुकरात** का मत है कि कवि किसी विशिष्ट प्रकृति के अनुसार प्रेरित होकर काव्य की रचना करता है | उनके अनुसार - 'कवि कविता इस कारण नहीं करते कि वे बुद्धिमान हैं, वरन् इस कारण कि उनमें एक विशिष्ट प्रकृति अथवा प्रतिभा है जो उत्साह प्रदान करने वाली होती है |'

जबकि **प्लेटो** ने मानसिक विक्षिप्तता को काव्य का प्रमुख हेतु माना है | वे एक तरह से मानते हैं कि कवि एक विक्षिप्त प्राणी होता है और उसका काव्य विक्षिप्त क्षणों की वाणी होती है | वस्तुतः प्लेटो का समूचा विवेचन विशेष आग्रहों एवं बद्धमूल परम्पराओं पर आधारित है |

इसीलिए उनके शिष्य **अरस्तू** ने उससे अलग हटते हुए काव्य-जन्म के दो कारण निर्धारित किए - पहला **अनुकरण,** दूसरा **सामंजस्य और लय** | वे कला की मूल प्रेरणा में अनुकरण की प्रवृत्ति को विशेष महत्त्व देते हैं क्योंकि यही प्रवृत्ति कवि को रचना के लिए प्रेरित करती है | वस्तुतः यह अनुकरण अभ्यास होता है | अतः अरस्तू के अनुसार अनुकरण (अभ्यास) ही काव्य-हेतु है |

होरेस ने अनुकरण को काव्य का प्रेरक बताते हुए भी प्रतिभा और लोकज्ञान को समन्वित रूप से काव्य-सर्जना का कारण माना है | **वर्ड्सवर्थ** और **कालरिज** ने भी प्रतिभा और लोकशास्त्र के ज्ञान का ही पक्ष लिया है | इस प्रकार इन विद्वानों के विचार भारतीय आचार्यों से काफी मिलते हैं | किन्तु फ्रायड, एडलर, युंग और हडसन ने कुछ नए रूपों में मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विचार किया है |

फ्रायड ने सभी क्रियाओं की उत्पत्ति का मूल कारण काम-वासना को माना है | उनके अनुसार दमित कामनाएँ या अतृप्त वासनाएँ ही मनुष्य को काव्य-सृष्टि की ओर प्रेरित करती हैं | स्पष्ट है कि फ्रायड दमित कामनाओं या अतृप्त वासनाओं को ही काव्य-हेतु मानते हैं |

एडलर के अनुसार जीवन के अभाव मनुष्य-मन में हीनता की ग्रन्थियाँ बनाते हैं और इन्हीं अभावों की पूर्ति हेतु अथवा ग्रंथियों से प्रेरित होकर वह काव्य-रचना में प्रवृत्त होता है | इस प्रकार क्षतिपूर्ति ही काव्य-हेतु है | इसी तरह **युंग** ने प्रभुत्व-कामना को काव्य का हेतु बताया है, जबकि **हडसन** ने आत्माभिव्यंजना की इच्छा, यथार्थ एवं काल्पनिक जगत तथा मनुष्य के कार्यों के प्रति अनुराग एवं सौंदर्यानुभूति को काव्य का प्रेरक तत्त्व माना है | इस प्रकार इन विचारकों के मत भी अपना आंशिक महत्त्व रखते हैं |

स्पष्ट है कि संस्कृत विद्वानों से लेकर पाश्चात्य विचारकों तक ने काव्य-हेतु के संदर्भ में जो मत व्यक्त किए हैं उनमें प्रतिभा, व्युत्पत्ति और अभ्यास ये तीन ऐसे हेतु हैं जिन्हें प्रायः सभी ने स्वीकार किया है | यह अवश्य है कि किसी विद्वान के विचार से प्रतिभा विशेष महत्त्व रखती है तो किसी के विचार से व्युत्पत्ति एवं अभ्यास | हम तो यही कहेंगे कि ये तीनों काव्य के प्रमुख हेतु हैं तथा अन्योन्याश्रित हैं | कहने का अर्थ यह है कि एक के अभाव में दूसरे की कल्पना करना उचित नहीं क्योंकि तीनों मिलकर ही सर्वोत्कृष्ट रचना के कारण बनते हैं |

=======

आचार्यों में भरत, भामह, कुंतक, रुद्रट, मम्मट

अर्थात् निर्वृ हैं कीर्ति म् च्छ् कढ़ै

s कीं · **शब्दार्थौ शब्दाथौ**

आ आॅस्कर ð